



## कौटिल्य कालीन मुद्रा व्यवस्था: एक विश्लेषण

विनायक कुमार उपाध्याय  
(शोध छात्र) नेहरू ग्राम भारती, मानित विश्वविद्यालय  
प्रयागराज, उ०प्र०

प्रत्येक युग में राजव्यवस्था को चलाने के लिए राजा की ओर से कुछ निर्धारित सिक्के बनाए जाते हैं जिससे प्रजावर्ग राज्य को कर देता है और वृत्ति के रूप में स्वयं कुछ पाता है। कौटिल्य युग में एक विकसित अर्थव्यवस्था का प्रादुर्भाव हो चुका था और विनिमय का माध्यम स्वर्ण और चांदी के सिक्के बन चुके थे जैसा कि के०टी० शाह ने अपनी पुस्तक में लिखा है—

‘जैसा कि अर्थशास्त्र में सिक्के पर प्रभुत्व, कम वजन वाले सिक्कों को काट देना, खराब सिक्कों को चलाना आदि कठिन विषयों पर जो व्यवस्था दी गई है, उससे यह ज्ञात होता है कि उस समय की मुद्रा व्यवस्था उच्च स्तर की थी।’<sup>1</sup>

लक्षणाध्यक्ष (सिक्कों के निर्माण का अधिकारी) अपनी देखरेख में राजकीय सिक्कों का निर्माण करवाता था। वह पण, अर्धपण, पादपण तथा अष्ट भाग नामक चार चांदी के सिक्कों को विधिपूर्वक ढलवाता था। 16 मास का एक पण होता था। उसमें 4 माष तांबा, लोहा, रांगा, सीसा तथा अंजन इनमें से कोई भी एक माप, बाकी 11 माष चांदी होनी चाहिए। इसी हिसाब से अर्धपण (अठन्नी) पादपण (चवन्नी) और अष्टभाग पण (दुअन्नी) आदि को ढलवाना चाहिए। पण के चौथे हिस्से को व्यवहार में लाने के लिए तांबे का एक अलग सिक्का होना चाहिए जिसमें चौथाई हिस्सा चांदी, एक हिस्सा लोहा, सीसा आदि में से कोई एक और ग्यारह माष तांबा होना चाहिए, इस सिक्के का नाम माषक है जिसका वजन सोलह माष होता है, इसका भी अर्धमाषक सिक्का तैयार करवाना चाहिए। पादमाषक तथा अष्ट भागमाषक के लिए ‘काकणी’ तथा ‘अर्धकाकणी’ नामक सिक्कों को बनवाना चाहिए।<sup>2</sup>

इससे विदित होता है कि लोग स्वर्ण सिक्कों के शुद्धता एवं अशुद्धता की पूरी जानकारी रखते थे। रूपदर्शक (सिक्कों का परीक्षक) अधिकारी इस बात का निर्णय करता था कि कौन से सिक्के चलने लायक हैं और कौन से कोष में जमा कर देने चाहिए।

‘सिक्कों के परीक्षण करने वाले विशेषज्ञों से सिक्कों की शुद्धता जानकर सुवर्ण संग्रह करं।’<sup>3</sup>

‘राज्य में कोई व्यक्ति कपटपूर्ण व्यवहार से नकली सिक्कों का प्रचलन न करें, अतः बड़े सावधानी से काम करना चाहिए। कौटिल्य ने इस प्रकार के अशुद्ध सिक्कों को काट देने की व्यवस्था की।’<sup>4</sup>

सौ पण पर आठ पण राज्य का लाभांश समझा जाता था जिसे रूपिक कहते थे। सौ पण पर पांच पण लाभांश ‘ब्याजी’ और सौ पण के आठवे भाग को ‘पारीक्षिक’ कहते थे। यदि कोई व्यक्ति जाली सिक्के बनाता था या उन्हें दूसरों के व्यवहार में लाता था तो प्रत्येक पण पर 25 पण अन्याय (हरजाना) भरना पड़ता था। परन्तु सिक्के बनाने, बेचने, खरीदने और परीक्षण करने का अधिकार जिन्हें राज्य की ओर से मिला था, उन पर यह हरजाना लागू नहीं होता था।

‘अर्थ’ रूपी माया को देखकर बड़े-बड़े लोगों का मन भी विचलित हो जाता था। फिर कोष में काम करने वाले अधिकारियों का मन क्यों नहीं विचलित होगा। ऐसे लोगों के सम्बन्ध में कौटिल्य ने कहा है कि ‘जो कोषाधिकारी कोष का अपहरण करता है उसे प्राणदण्ड देना चाहिए।’<sup>5</sup>

राष्ट्र के उत्तरदायित्वपूर्ण स्थान पर कार्य करता हुआ व्यक्ति यदि व्यक्तिगत स्वार्थ हेतु अपने पद का दुरुपयोग करता है तो उसे कौटिल्य ने प्राणदण्ड देना इसलिए आवश्यक माना है जिससे भविष्य में कोई अन्य व्यक्ति ऐसा राष्ट्रविरोधी कार्य करने की भावना अपने मन में न ला सके। मनुष्य दो कारणों से अपना कार्य निष्ठा से कर सकता है—

अ— या तो उसके हृदय में राष्ट्र के प्रति स्नेह हो।

ब— या राष्ट्र के कठोर और निष्पक्ष नियमों से डरता हो।

इससे यह स्पष्ट होता है कि उस युग में बहुमुखी आर्थिक विकास था, लोग नौकरी करते हुए राष्ट्र की सम्पत्ति को अपहरण करने से डरते थे।

प्राचीन आर्थिक सिद्धान्तों का अध्ययन करने पर एवं व्यवहार को चलाने वाली वस्तु ‘मुद्रा’ पर ध्यान देने से पता चलता है कि उस युग में बहुमूल्य धातुएँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो जाती थी और सिक्कों का निर्माण, सुरक्षा स्थिरता एवं जनता को उसके अवमूल्यन का भय नहीं रहता था क्योंकि बहुमूल्य धातु स्वर्ण से इन सिक्कों का निर्माण होता था। प्रत्येक व्यक्ति को अपने उपाजित धन का वास्तविक मूल्य मालूम था। स्वर्ण के सिक्के होने के कारण उनके ‘अवमूल्यन’ एवं ‘स्फीति’ का प्रश्न ही नहीं उठता था। यदि स्वर्ण सिक्के प्रचुर मात्रा में हो जाते तो कोई हानि नहीं होती वरन् इससे तो राष्ट्र की समृद्धि का ज्ञान होता था कि राष्ट्र के पास अपार धन सम्पदा है।

प्रत्येक युग में राज्य व्यवस्था को चलाने के लिए राजा की ओर से कुछ निर्धारित सिक्के बनाए जाते हैं, जिससे प्रजावर्ग राज्य को कर देता है और वृत्ति के रूप में स्वयं कुछ प्राप्त करता है। पहले वस्तु विनियम के द्वारा जो कार्य होता था, कौटिल्य युग में वह स्थान स्वर्ण-सिक्के ले चुके थे। कौटिल्य ने स्वर्ण सिक्कों का वर्णन इस प्रकार किया है, यथा—‘सिक्कों का परीक्षण करने वाले विशेषज्ञों से सिक्कों की शुद्धता जानकर सुवर्ण संग्रह करें।’<sup>6</sup>

उस युग में लोग स्वर्ण की शुद्धता एवं अशुद्धता की पूरी जानकारी रखते थे। उनके ये कार्य आजकल के टकसाल के समान हैं। राज्य में कोई व्यक्ति कपटपूर्ण व्यवहार से नकली सिक्कों का प्रचलन न करें, कोई व्यक्ति कपटपूर्ण व्यवहार से नकली सिक्कों का प्रचलन न करें, अतः बड़े सावधानी से कार्य करना चाहिए।

इसके साथ ही कुछ ऐसे अकर्मण्य लोग बिना किसी उद्योग के धनवान बनना चाहते थे। वे लोग जाली सिक्के बनाकर राज्य को धोखा देना चाहते हैं। ऐसे लोगों को प्रथम साहस दण्ड देने की व्यवस्था की गई है—‘दुस्साहस करने वाले को प्रथम साहस में दण्ड देना चाहिए।’

इस प्रकार अर्थशास्त्र के उद्घरणों से यह ज्ञात होता है कि कौटिल्य कालीन मुद्रा व्यवस्था में विनिमय का माध्यम वस्तु विनिमय न रहकर स्वर्ण तथा चांदी के सिक्के ले चुके थे। लक्षणाध्यक्ष (सिक्कों के निर्माण का अधिकारी) अपनी देखरेख में सिक्कों का निर्माण करवाते थे। रूपदर्शक (सिक्कों का परीक्षक) इस बात का निर्णय करता था कि कौन से सिक्के चलने लायक हैं। जाली सिक्के बनाकर राज्य को धोखा देने वाले को प्रथम साहस दण्ड की व्यवस्था थी।

1. The numerous and Complicated Mint regulations as outlined in the Arthashastra and other Ancient treatises on the subject including seign or age, cutting of coins below standard weight or below prescribed fineness, penalties on those who pass such coins or counterfeit them, all Indicates the high level of the money economy that has become usual in the days of Chanakya - K.T. Shah, Ancient Foundation of Economics.
2. लक्षणाध्यक्षः चतुर्भार्गताम्रं रूप्यरूपं तीक्ष्णत्रपुसीसाज्जनानाम- न्यतमाषबीजयुक्तं कारयेत् पणम्, अर्घपणं पादमष्टभागमिति। पादाजीवं ताम्ररूपं माषकमर्घमाषकं काकणीमर्घकाकणीमिति। कौटि. अर्थ., 2/28/12/3
3. रूपदर्शक विशुद्धं हिरण्यं प्रतिगृह्णीयाद्, 2/21/5/1
4. अशुद्धं छेदयेत् 2/21/5/1
5. आहर्तुः पूर्वः साहसदण्डः 2/21/5/1
6. कोशाधिष्ठितस्य कोशावच्छेदे घातः 2/21/5/5
7. गैरोला, वाचस्पति, कौटिलीय अर्थशास्त्रम्, वाराणसी, 2021

